जुगोपात्मानमत्रस्तो भेजे धर्ममनातुरः ।

अगृध्नुराददे सोऽर्थमसक्तः सुखमन्वभूत् ।।21।।

अन्वय स अत्रस्तः आत्मानं जुगोप, अनातुरः धर्म भेजे, अगृध्नुः अर्धम् आददे, असक्तः सुखम् अन्वभूत्।

अनुवाद राजा दिलीप निर्भीक होकर अपनी रक्षा करते थे (किसी के भय से नहीं), अनातुर (नीरोग) होकर धर्म का पालन करते थे (किसी स्वार्थ से नही)। लोभरहित होकर धन का संग्रह करते थे (लोभ से नहीं), तथा आसक्ति को त्यागकर सांसारिक सुख का अनुभव करते थे (आसक्ति से नहीं)

टिप्पणियां

अत्रस्तः न त्रस्तः, अत्रस्तः (नञ् तत्पुरुष)। बिना डरे हुए।

जुगोप धातु गुप् लिट्, अन्य पुरुष एक वचन, (उसने) रक्षा की। महाराजा दिलीप अपने शरीर की भलीभांति रक्षा करता था यद्यपि उसे किसी से भय नहीं था। शास्त्रों के अनुसार राजा के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी सुरक्षा का पूर्ण ध्यान रखे, भले ही भय का कोई कारण न हो। अपनी सुरक्षा के लिए चक्रवर्ती दिलीप ने रक्षकादि भी नियुक्त नहीं किये थे क्योंकि वह स्वयं अपनी शूरता से ही अपनी रक्षा करने में समर्थ था। देखिये- **'स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः'** मनु की सन्तान अपने वीर्य (बल) से ही रक्षित थी।

भेजे धातु भज् लिट्, अन्य पुरुष, एक वचन, पालन किया।

अनातुरः न आतुरः अनातुरः (नञ् तत्पुरुष)। किसी रोग से पीड़ित न होकर; स्वस्थ अवस्था में ही। प्रायः रोगग्रस्त हो जाने में अथवा विपत्ति के सिर पर आ पड़ने पर ही

लोग ईश्वर को स्मरण करते हैं और धर्म का पालन करते हैं। परन्तु राजा दिलीप किसी स्वार्थ से नहीं अपितु अपना कर्तव्य समझकर यज्ञ आदि धार्मिक कृत्यों का अनुष्ठान करते थे। गीता में चार प्रकार के भक्त कहे हैं, उनमें ही एक आतुर भी है **''चतुर्विद्या भजन्ते मां...आर्तो...''** (गीता 7/16) इति।। परन्तु धर्मपालन में तत्पर दिलीप अनातुर ही रहते थे।

असक्तः न सक्तः, असक्तः (नञ् तत्पुरुष)।

अगृध्नुः बिना लोभी हुए अर्थात् लोभ में आकर नहीं। अगृध् क्नु। दिलीप ने धन का संग्रह लोभवश नहीं किया था, अपितु शास्त्र के विधानानुसार ('राजा को एक समुचित धनराशि का संचय करना चाहिये'') ही किया था। **''मा गृधः कस्य स्विद्धनम्''** (ईशावस्योपनिषद्)।

अन्वभूत् अनु उपसर्ग धातु भू लृङ् प्रथम पुरुष, एकवचन, अनुभव किया, भोगा।